इकाई 1 सामाजिक रूपांतरण और समस्याएँ

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 सामाजिक रूपांतरण की अवधारणा

1.2.1 आधुनिकीकरण का प्रारूप

1.2.2 मार्क्सवादी क्रांतिकारी प्रारूप

1.3 रूपांतरण और सामाजिक समस्याएँ

1.3.1 परंपरागत और आधुनिक समाज

1.3.2 रूपांतरण के पूर्व और पश्चात्

1.3.3 श्रृंखलाबद्धता के उदाहरण

1.4 सामाजिक समस्या की अवधारणा

1.4.1 जनसाधारण का प्रतिबोधन

1.4.2 सामाजिक आदर्श और यथार्थ

1.4.3 सार्थक संख्या द्वारा मान्यता

1.5 परिभाषाएँ

1.5.1 सामाजिक समस्याओं की विशेषताएँ

1.5.2 सामाजिक समस्याओं के प्रकार

1.6 सामाजिक समस्याएँ और सामाजिक आंदोलन

1.6.1 क्रियान्वयन में अवरोध

1.6.2 आंदोलन के सोपान

1.7 सामाजिक समस्याएँ और सामाजिक नीति

1.7.1 नीति, विचारधारा और कल्याण

1.8 सारांश

1.9 शब्दावली

1.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.0 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य सामाजिक रूपांतरण और सामाजिक समस्याओं के मध्य संबंध का वर्णन करना है। आपके द्वारा इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति संभव होगी :

- सामाजिक रूपांतरण, इसके दो प्रारूपों – "आधुनिकीकरण" तथा "क्रांति" की अवधारणा को सीखना और उनका समालोचनात्मक मूल्यांकन;
- सामाजिक रूपांतरण और सामाजिक समस्याओं के मध्य संबंध को समझना;
- सामाजिक समस्याओं की अवधारणा और संबंधित प्रश्नों का वर्णन;
- सामाजिक समस्याओं की सुस्पष्ट परिभाषाएँ, विशेषताएँ और प्रकार;

- सामाजिक समस्याओं, संस्थाओं और आंदोलनों के मध्य श्रृंखलाबद्धता का विवेचन;. और
- रूपांतरण और समस्याओं के संबंध में नीति-संबंधी निहित आशय को स्पष्ट करना।

1.1 प्रस्तावना

इस इकाई की विषयवस्तु सामाजिक रूपांतरण और सामाजिक समस्याएँ हैं। निःसंदेह आपको इन दोनों प्रक्रियाओं के मध्य के संबंध को समझना है। समाज और सामाजिक समस्याओं में से कोई भी स्थिर नहीं है। सामाजिक समस्याएँ घनिष्ठ रूप से सामाजिक संरचना, विचारधाराओं, मूल्यों, अभिवृत्तियों, संस्थाओं, शक्ति, प्राधिकार और समाज के हितों से जुड़ी हुई हैं। सामाजिक रूपांतरण की प्रक्रिया सामाजिक जीवन के उपर्युक्त विभिन्न पक्षों में परिवर्तन लाती है और साथ ही साथ नयी सामाजिक समस्याएँ भी उत्पन्न करती है।

सर्वप्रथम, हम सामाजिक रूपांतरण की सैद्धांतिक पृष्ठभूमि को समझने की चेष्टा करेंगे। समाजशास्त्र के प्रारंभ में "उद्‌विकास" और "प्रगति" की अवधारणाएँ समाज के गत्यात्मक पक्ष को प्रकट करने के लिए प्रयुक्त होती थीं। धीरे-धीरे यह अनुभव किया गया कि ये अवधारणाएँ "मूल्यों से भारित" है इसलिए इनके स्थान पर "सामाजिक परिवतर्न" की अवधारणा का प्रयोग किया गया जिसे अधिक निरपेक्ष तथा मूल्यों से स्वतंत्र माना गया।

द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् सामाजिक विज्ञानों की शब्दावली में "विकास " और "आधुनिकीकरण " की अवधारणाओं ने एक महत्वपूर्ण स्थान ग्रहण किया। यह दोनों अवधारणाएँ विकसित, औद्योगीकृत, पूँजीवादी और लोकतांत्रिक समाजों की विचारधाराओं का प्रतिनिधित्व करती हैं। मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित समाज वैज्ञानिकों के एक समूह ने "आधुनिकीकरण" के स्थान पर "क्रांति" के प्रयोग को वरीयता दी। ये लोग पूँजीवादी प्रणाली का कायाकल्प करना चाहते थे।

"सामाजिक रूपांतरण" एक विस्तृत अवधारणा है जो सामाजिक गत्यात्मकता को दर्शाती है। सामाजिक रूपांतरण की अवधारणा में एक ओर उद्‌विकास, प्रगति और परिवर्तन तथा दूसरी ओर विकास, आधुनिकीकरण और क्रांति का अर्थ समाविष्ट है।

सामाजिक रूपांतरण और सामाजिक समस्याएँ एक दूसरे के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़ी हैं। समाज स्थिर नहीं है इसके उपरांत भी समाज के प्रभुत्वशील समूह किसी भी तरह समाज पर अपनी पकड़ बनाए रखने की ओर दमनकारी विधियों द्वारा अपने निहित स्वार्थों की सुरक्षा का प्रयत्न करते हैं। इस प्रकार यदि नकारात्मक रूप से अपनी बात कही जाए तो, यदि सामाजिक रूपांतरण की प्रक्रिया का दमन किया जाता है तो यह अनेक नई समस्याएँ उत्पन्न करती है। दूसरी ओर यदि सामाजिक रूपांतरण की प्रक्रिया स्वाभाविक रूप से चलती रहती है तो, पुरानी व्यवस्था के अवनति और नई व्यवस्था के उद्‌भव के बीच संक्रमण काल में समाज सामंजस्य की समस्याओं का सामना करता है।

1.2 सामाजिक रूपांतरण की अवधारणा

द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् "सामाजिक रूपांतरण" की अवधारणा का सामाजिक विज्ञानों में एक महत्वपूर्ण स्थान है। इस अवधारणा का शाब्दिक अर्थ "परिवर्तनशील स्वरूप", "प्रतीति" या "लक्षण" अथवा मान्यताओं में बदलाव से है। कार्ल मार्क्स द्वारा विशेष रूप से अपनी पुस्तक "जर्मन आइडियोलॉजी" (1846) में विशेष रूप से इस अवधारणा को प्रयुक्त किया गया इसका आशय सामाजिक परिवर्तन के उस पक्ष से है जो त्वरित परिवर्तन या

क्रांति की तरफ बढ़ते हुए समाज में अंतर्विरोधों की वृद्धि को दर्शाता है। मार्क्स अनुभव करता है कि सामाजिक विकास के कुछ सोपानों पर उत्पादन की भौतिक शक्तियों और उत्पादन के प्रचलित नियमों के मध्य संघर्ष होता है। इन अंतर्विरोधों पर आधारित संघर्ष सामाजिक क्रांति का मार्ग प्रशस्त करता है। सामाजिक क्रांति की इस अवस्था को मार्क्स ने त्वरित सामाजिक रूपांतरण की अवधि कहा है। सामाजिक रूपांतरण समाज के स्वरूप में परिवर्तन या नवीन विरचनाओं की उत्पत्ति को निर्दिष्ट करता है। रजनी कोठारी (1988) का दृष्टिकोण है कि सामाजिक रूपांतरण के "आधुनिकीकरण" तथा "क्रांति" दो मुख्य प्रारूप है। इन्हें निम्नलिखित प्रकार से प्रदर्शित किया जा सकता है:

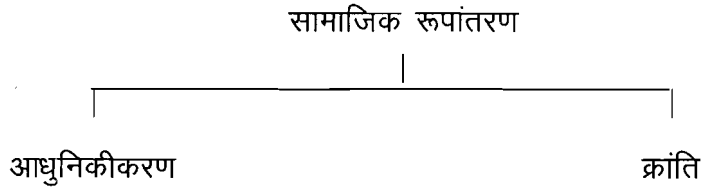

हम रूपांतरण के इन दोनों प्रारूपों की बारी-बारी से विवेचना करेंगे।

1.2.1 आधुनिकीकरण का प्रारूप

आधुनिकीकरण एक अवधारणा के रूप में पश्चिमी यूरोप, तथा उत्तरी अमेरिका के औद्योगिक, पूँजीवादी और लोकतांत्रिक समाजों के विचारधाराओं तथा मूल्यों का प्रतिनिधित्व करता है। आधुनिकीकृत संरचना के विपरीत एशिया, अफ्रीका और दक्षिण अमेरिका की सामाजिक संरचना, कृषीय, परंपरागत, प्रथा-आधारित तथा प्रौद्योगिक और आर्थिक रूप से पिछड़ी हुई है। जैसा कि डेनियल लर्नर (1964) ने स्पष्ट किया है, आधुनिकीकरण साक्षरता, राजनैतिक सहभागिता, नगरीकरण, व्यावसायिक गतिशीलता और समानुभूति का द्योतक है। आधुनिकीकरण की दूसरी विशेषताएँ मुक्त बाजार, औद्योगिकरण, लोकतांत्रिक, राज्य और आधुनिक शिक्षा है। आधुनिकीकरण के पाँच प्रमुख आयाम यथा – प्रौद्यागिकी, आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक हैं। अपने घटकों के साथ ये निम्नलिखित प्रकार से प्रस्तुत किए जा सकते हैं :

आधुनिकीकरण

प्रौद्योगिक	**आर्थिक**	**राजनीतिक**	**सामाजिक**	**मनोवैज्ञानिक**
• ऊर्जा के निर्जीव स्रोत	• बाज़ार	• स्वतंत्रता	• गतिशीलता	• सर्वदेशीय-मन
• आधुनिक यंत्र	• पूँजी	• व्यक्तिवादिता	• व्यावसायिक विभिन्नीकरण	• उपलब्धियाँ
• भारी प्रौद्योगिकी	• वस्तु या जिन्स • उपभोगवादिता	• लोकतंत्र • सहभागिता	• सार्वभौमवाद • विशिष्टता • नगरीय-औद्योगिक संस्कृति • साक्षरता और आधुनिक शिक्षा	• पूर्वाभिमुखीकरण • समानुभूति

आधुनिकीकरण के प्रारूप में रूपांतरण को लगातार, विकासीय, क्रमिक और सीधा माना जाता है। इस क्रमिक प्रक्रिया में परिवर्तन एक दीर्घ अवधि का परिणाम है। यह उल्लेखनीय है कि आधुनिकीकरण की प्रगति समाज में संरचनात्मक रूपांतरण को चित्रित करती है।

जैसा कि बताया जा चुका है, विकास का आधुनिकीकरण प्रारूप का औद्योगिकी और औद्योगिक समाज की प्रक्रिया साथ घनिष्ठ संबंध है। हम बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में हैं। औद्यागिक समाज को भी पिछले कई दशकों से अद्‌भुत परिवर्तनों से गुजरना पड़ा।

1.2.2 मार्क्सवादी क्रांतिकारी प्रारूप

इस प्रारूप में परिवर्तन मनुष्य की मध्यस्थता द्वारा लाया जाता है। जैसा कि ऐंग्लस ने निर्दिष्ट किया है कि मनुष्य ही वह एकमात्र प्राणी है जो अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप रूपांतरण लाने में समर्थ है।

फ्रांस (1779) तथा अमेरिका (1789) की क्रांति से पृथक इस शताब्दी में सोवियत संघ (1917) तथा चीन (1949) में क्रांतिकारी सामाजिक रूपांतरण का प्रभावशाली परीक्षण किया गया। इस प्रारूप के प्रतिपादकों के अनुसार औद्योगिक पूँजीवादी प्रणाली मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण से आक्रांत है। इसने अपूर्व सामाजिक विषमताओं को उत्पन्न किया। औद्योगिकीकरण, भारी प्रौद्योगिकी के उपयोग तथा व्यापक पैमाने पर उत्पादन के होते हुए भी, आधुनिकीकरण के पूँजीवादी प्रारूप में मनुष्य ने अपनी गरिमा खो दी है। क्रांतिकारी रूपांतरण ही विषमता, शोषण, बेकारी तथा अमानवीयकरण का उन्मूलन कर सकता है।

मार्क्सवाद-लेनिनवादी क्रांतिकारी रूपांतरण की अवधारणा का अंतिम लक्ष्य समानता पर आधारित वर्गरहित तथा राज्यविहीन समाज का निर्माण करना है। क्रांति के पश्चात् संक्रमण की अवस्था में, क्रांतिकारी रूपांतरण पर आधारित समाज की निम्नांकित विशेषताओं की विशेष रूप से चर्चा की जा सकती है :

रूपांतरण के क्रांतिकारी प्रारूप पर आधारित समाज

(संक्रमणकालीन अवस्था)

उत्पादन के साधनों का सामूहिक स्वामित्व	*सर्वहारा वर्ग के अधिनायकवाद पर आधारित शक्ति-संरचना*	*एकमात्र राजनीतिक दल (साम्यवादी दल) और उसके पोलिटब्यूरो पर आधारित निर्णय*

कोष्ठक 1.1

संस्कृतिकरण और पश्चिमीकरण

भारतीय प्रसंग में, रूपांतरण की दो प्रक्रियाओं – "संस्कृतिकरण" और "पश्चिमीकरण" के मध्य एक स्पष्ट भेद किया जा सकता है। श्रीनिवास द्वारा प्रयुक्त संस्कृतिकरण यह निर्दिष्ट करता है कि उच्च जातियों के आचरणों और प्रथाओं का निम्न जातियों द्वारा किस प्रकार अनुकरण किया जाता है, जबकि पश्चिमीकरण का आशय भारतीय समाज पर पश्चिमी संस्कृति, मूल्यों और संस्थाओं के संघात से है। आधुनिकीकरण की मूलभूत विशेषताएँ पश्चिमीकरण की विशेषताओं के सदृश है।

इन प्रारूपों का समालोचनात्मक मूल्यांकन

मानव समाज ने रूपांतरण के दोनों प्रारूपों – "आधुनिकीकरण" तथा "क्रांति" का अनुभव किया है। जैसा कि राजनी कोठारी ने उल्लेख किया है मानव ने इन दोनो प्रारूपों के मध्य चलने वाली तीव्र प्रतियोगिता को देखा है जिससे शीत युद्ध, विध्वंसकारी अस्त्र-शस्त्र, पारमाणविक अस्त्रों की धमकी, विश्व का दो शक्ति समूहों में विभाजन (सोवियत संघ के विघटन से पूर्व) और दूसरों पर प्रभुत्व स्थापन जैसी विश्वव्यापी समस्याओं का जन्म हुआ।

उन्नीसवीं शताब्दी में यूरोपीय चिंतन पूर्ण रूप से आशावादी था। प्रगति में इसकी पूर्ण आस्था थी। प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात् जोसेफ जे. स्पेंग्लर (डिक्लाइन ऑफ द वेस्ट) तथा पी.ए. सोरोकिन (सोशियो-कल्चरल डाइनामिक्स) द्वारा पश्चिमी सभ्यता, इसके विकास, प्रतिमान और भौतिक उन्नति के विरोध में स्वर उठाए गए। इन लेखकों ने बल दिया है कि पश्चिमी सभ्यता जो कि भौतिकवाद, औद्योगिकीकरण और आधुनिक प्रौद्योगिकी का प्रतिनिधित्व करती है, अवनति की ओर बढ़ रही है।

कार्ल मानहाइम (मैन एंड सोसायटी इन एन एज़ ऑपा रिक्न्स्ट्रक्शन), एरिक फ्राम (सेन सोसायटी) और पी.एल. बर्गर तथा अन्य (होमलेस माइन्ड) ने आधुनिकीकरण के औद्योगिक पूँजीवादी प्रतिमान की अवधारणा का गहन विश्लेषण किया है। उनका दृष्टिकोण है कि पश्चिम के औद्योगिकीकृत पूँजीवादी समाज निम्नलिखित दिशाओं की ओर बढ़ रहे हैं :

- अवनति,
- विघटन और विसंगठन,
- सांस्कृतिक मूल-हीनता,
- परिवार और धर्म जैसी संस्थाओं का दुर्बल होना,
- व्यक्तियों की स्वायत्तता में ह्रास, तथा
- एक जन-समाज का उद्भव।

क्रांति के प्रतिफल के रूप में साम्यवादी क्रियाकलापों, इसकी उत्पादन व्यवस्था, आर्थिक संगठन और शक्ति संरचना की क्रुश्चेव, ज़िलास और गोर्वाचेव ने आलोचना की। एक प्रणाली के रूप में इसने अधिनायकवाद, पुलिस आतंक, देश निष्कासन, मानवाधिकारों का हनन, उत्पादन में गिरावट, अर्थव्यवस्था का पतन तथा एक दलीय पदाधिकारियों पर आधारित नए वर्ग एवं राज्य अधिकारियों को उत्पन्न किया। रूपांतरण के दोनों प्रारूप हिंसा, संसाधनों का असमान वितरण, निर्धनता, बेकारी जैसी सामाजिक समस्याओं का समाधान न पा सके। हमें यह ध्यान मे रखना है कि जब समाज एक संरचना से दूसरी संरचना की ओर बढ़ना प्रारंभ करता है तो कुछ समस्याएँ निश्चित रूप से उत्पन्न होती हैं। समाज जब एक निर्माण से दूसरे निर्माण की ओर अथवा रूपांतरण के एक सोपान से दूसरे सोपान की ओर बढ़ता है तो इन दोनों स्थितियों के मध्य की अवधि "संक्रमण" की स्थिति मानी जाती है। किसी भी समाज में संक्रमण का काल सामाजिक और मनोवैज्ञानिक सामंजस्य, सांस्कृतिक समायोजन और आर्थिक पुनर्निर्माण की समस्याएँ उत्पन्न करता है। समाज चुनौतियों और प्रत्युत्तर के प्रतिरूप पर आगे बढ़ता है। जब कभी समाज पर कोई चुनौती आती है तब वह इसका प्रत्युत्तर देने की चेष्टा करता है। जब प्रत्युत्तर प्रभावी होता है तब सकारात्मक रूपांतरण तथा विकास होता है। जब सामाजिक समस्याएँ व्यापक मात्रा में होती हैं और प्रत्युत्तर चुनौतियों का सामना नहीं कर पाता तब समाज में अधोगामी अवस्था आती है। सरल शब्दों में कहा जाए तो सामाजिक समस्याएँ सामाजिक रूपांतरण का परिणाम है। सामाजिक समस्याओं के समाधान के प्रयत्न सामाजिक रूपांतरण को प्रारंभ कर सकते हैं।

बोध प्रश्न 1

i) सामाजिक रूपांतरण के अर्थ को आठ पंक्तियों में स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

ii) सामाजिक रूपांतरण के प्रारूपों का उल्लेख कीजिए तथा उनके द्वारा उत्पादित मुख्य समस्याओं की गणना आठ पंक्तियों में कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

iii) पश्चिमी, भौतिकवादी, पूँजीवादी आधुनिकीकरण के प्रारूप के प्रमुख आलोचकों के नाम उनकी पुस्तकों के शीर्षक के साथ बताइए :

क) .....

.....

ख) .....

.....

ग) .....

.....

घ) .....

.....

च) .....

.....

iv) सामाजिक रूपांतरण के क्रांतिकारी प्रारूप की आलोचना पाँच पंक्तियों में लिखिए:

.....

.....

.....

.....

.....

1.3 रूपांतरण और सामाजिक समस्याएँ

रूपांतरण की प्रक्रिया में समाज परंपरागत संरचना से आधुनिक समाज संरचना की ओर अग्रसर होता है। विद्वानों ने भी उल्लेख किया है कि सूचना और संचार प्रौद्योगिकी के तीव्र प्रसार, औद्यागिक विकास और भौतिक संचार नेटवर्क इत्यादि के फलस्वरूप मानव समाज ज्यादा से ज्यादा सार्वभौमिक हो रहे हैं। इसके मध्य "संक्रमण" की अवस्था होती है जिसमें अनेकों समस्याएँ पाई जाती हैं।

1.3.1 परंपरागत और आधुनिक समाज

कृषि, ग्राम, लघुस्तरीय अविकसित प्रौद्योगिकी, प्रथाएँ और सरल सामाजिक संरचना, परंपरागत समाजों की प्रमुख विशेषताएँ हैं। कहा जाता है कि परंपरागत समाजों में समाजिक संबंधों में और समस्याओं में तालमेल होता है। संस्थाओं, स्वीकृत प्रतिमानों तथा व्यवहार के प्रतिरूपों के मध्य अनुरूपता पाई जाती है। सामाजिक नियंत्रण की क्रियाविधि प्रथाओं, जनशक्तियों और लोकाचारों द्वारा कार्य करती है। परंपरागत समाजों में प्रत्याशाएँ और उपलब्धियाँ घनिष्ठ सहसंबंध की ओर उन्मुख होती हैं।

आधुनिक समाज की मुख्य विशेषताएँ उद्योग, नगर, भारी प्रौद्योगिकी, विधि का शासन, लोकतंत्र और जटिल सामाजिक संरचनाएँ हैं। परंपरागत समाज से आधुनिक समाज की ओर रूपांतरग के फलस्वरूप नए सामाजिक संबंधों और नई सामाजिक भूमिका की शुरुआत, नए लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए निर्धारित नए लक्ष्यों के पूर्ववर्ती व्यवहार को अप्रभावी बना देती है। इसकी तनावों और कुंठाओं में परिणति होती है। परिवर्तनों का सामना करने के लिए व्यवहार के नए प्रतिरूप उत्पन्न होते हैं। पुरानी स्थापित व्यवस्था परिवर्तित होती है तथा वहाँ भ्रॉति होती है। बहुत से सांस्कृतिक मदों में परिवर्तन (उदाहरण के लिए – प्रौद्योगिकी की स्वीकृति) का आशय जीवन में वैज्ञानिक अभिवृत्ति, कार्य के स्थान पर समय पालन, सामाजिक संगठनों के नवीन स्वरूपों जैसे – ट्रेड यूनियन की स्वीकृति से है जो परंपरागत मूल्यों से भिन्न हैं। रूपांतरण की अवस्था में लोगों को नई परिस्थितियों से सामंजस्य करने में समय लगता है। जिसमें पुरानी परिस्थितियों को पूरी तरह छोड़ा नहीं जाता और नवीन परिस्थितियों को पूर्ण रूप से स्वीकार नहीं जाता।

1.3.2 रूपांतरण के पूर्व और पश्चात्

जब कभी भी क्रमिक अथवा क्रांतिकारी रूपांतरण होता है तब समाज में कुछ निश्चित समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। समझने के उद्देश्य से हम समाज के दो सोपानों – रूपांतरण के पूर्व और रूपांतरण के पश्चात् पर ध्यान देंगे। पूर्व-रूपांतरण की अवस्था में लोग अपनी जीवन शैली, सामाजिक संबंधों, प्रतिमानों, मूल्यों, उत्पादक व्यवस्था और उपभोग के तरीकों को विकसित कर लेते हैं। रूपांतरण के जरिए लोगों से यह आशा की जाती है कि वे नवीन

आवश्यकताओं से स्वतः समायोजित होंगे। संक्रमणकालीन स्थिति में लोग पुरानी आदतों को बदलने में कठिनाई का अनुभव करते हैं।

इस बात की व्याख्या भारतीय समाज के उदाहरण से की जा सकती है। भारत ने अपनी स्वतंत्रता संघर्षों के रास्ते से – कभी क्रांतिकारी तरीकों द्वारा (उदाहरण को लिए सन् 1857 व 1942 का विद्रोह), तथा व्यापक रूप से उपनिवेशवाद के विरुद्ध शांतिपूर्ण किंतु दृढ़ प्रतिरोध द्वारा प्राप्त की। भारत एक प्राचीन सभ्यता होने के नाते कुछ परंपरागत संस्थाओं जैसे – जाति, संयुक्त परिवार और अस्पृश्यता से भी युक्त है। भारतीय समाज, परंपरागत सामाजिक संरचना से, आधुनिक सामाजिक संरचना की ओर बढ़ रहा है। वर्षों पुरानी परंपरागत संस्थाओं से अलग हटकर अब कुछ नयी संरचनाएँ संवैधानिक प्रावधानों जैसे आधुनिक राज्य संसदीय लोकतंत्र और समाज के नियोजित विकास हेतु बनाये संगठनों पर आधारित है। स्वतंत्रता के पश्चात संवैधानिक प्रावधानों द्वारा भारत में समाजिक रूपांतरण और नियोजित विकास, अस्पृश्यता उन्मूलन और न्यायोचित तथा समानता पर आधारित समाज की रचना हेतु सम्मिलित प्रयास किए जा रहे हैं। इन प्रयत्नों के होते हुए आज भी भारत के कई भागों में अस्पृश्यता किसी न किसी रूप में व्यवहारत है।

1.3.3 श्रृंखलाबद्धता के उदाहरण

सामाजिक रूपांतरण से कुछ समस्याएँ सीधे जुड़ी हैं। आधुनिक समाज में त्वरित आर्थिक विकास और औद्योगिकीकरण की प्रक्रियाएँ अपना स्थान लेने को बाध्य हैं। ये आधुनिकीकरण की सूचक हैं। लेकिन राज्य ही ये क्षेत्रीय असंतुलन, प्रदूषण, पारिस्थितिकी अपकर्ष, गंदी बस्तियों से जुड़ी-हिंसा, अपराध और दुराचार से संबंधित समस्याएँ भी उत्पन्न करती हैं।

माना जाता है कि लोकतंत्र सभी नागरिकों को समान अवसर प्रदान करता है। यह वैधानिक और राजनीतिक समानता में विश्वास करता है। यह भी माना जाता है कि इससे मानव की गरिमा में वृद्धि हुई है। लेकिन दुर्भाग्यवश चुनाव ने जो कि लोकतंत्र का आवश्यक अंग है, भारत में क्षेत्रवाद, साम्प्रदायिकता और जातिवाद को बढ़ावा दिया है। सम्पन्नता और अवकाश आधुनिक समाज के सूचक हैं। साथ ही ये अत्याधिक औद्योगिक समाजों एवं भारतीय समाज के धनाढ्य वर्ग में एकाकीपन, मद्यपान तथा मादक-द्रव्य व्यसन की समस्याएँ कर रहे हैं।

अभ्यास

एक कारखाने से प्रदूषण कैसे प्रभावित होता है? इस पर अपनी जानकारी के आधार पर दो पृष्ठों की टिप्पणी लिखिए।

1.4 सामाजिक समस्या की अवधारणा

सभी समाजों में कुछ ऐसी स्थितियाँ होती हैं जो उन पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं। सहज बुद्धि से सामाजिक समस्याएँ उन स्थितियों को माना जाता है जो समाज में विस्तृत रूप से फैली होती है और उस पर हानिकारक प्रभाव डालती है। यद्यपि यह बहुत सरल स्थिति नहीं है। एक समय में जिसे हानिकारक नहीं माना जाता उसे कुछ समय पश्चात् हानिकारक माना जा सकता है। धूम्रपान को बहुत समय तक गंभीर समस्या नहीं माना जाता था। अब स्वास्थ्य आपदाओं के प्रति बढ़ती जागरूकता से यह गंभीर चिंता का विषय बन गया है। ऐसा लगता है कि सामाजिक समस्याओं को समझना आसान है परंतु जब उनका समाधान करने का प्रयत्न किया है तो सामाजिक समस्याओं की जटिलताएँ प्रकट होती है।

एक समाज में जिसे सामाजिक समस्या माना जाता है, आवश्यक नहीं है कि उसे दूसरे समाज में उसी प्रकार समस्या माना जाए। यह प्रतिबोधन समाज में प्रतिमानों और मूल्यों पर आधारित होता है। कुछ समाजों में तलाक एक सामाजिक समस्या होती है, दूसरे समाजों में वह समस्या नहीं होती। इसी प्रकार से मद्यपान को भी ले सकते हैं। एक विस्तृत और विजातीय समाज में, इस संबंध में विभिन्न मत पाए जाते हैं। सभी समाजों में कुछ इस प्रकार के व्यवहार होते हैं, जिन्हें विचलनकारी या हानिकारक माना जाता है जैसे हत्या, बलात्कार, मानसिक रूग्णता। इन स्थितियों में कोई मूल्य-संघर्ष नहीं होता। हालांकि, भिन्न-भिन्न समाजों में इन समस्याओं के समाधान के रास्ते अलग-अलग होते हैं।

सामाजिक समस्याओं के अवधारणीकरण में बहुत से मुद्दे सम्मिलित होते हैं जिनका वर्णन निम्नवत है :

- किस सोपान पर कोई विशिष्ट दशा सामाजिक समस्या मानी जाती है?
- कैसे "क्या वास्तव में अस्तित्व में है" और "क्या होना चाहिए" के मध्य के अंतराल को निर्दिष्ट किया जाता है?
- सामाजिक समस्या के निर्धारण की कसौटी क्या है?

उपर्युक्त प्रश्न निम्नलिखित बिंदुओं से घनिष्ठ रूप से संबंधित हैं :

क) जनसाधारण का प्रतिबोधन

ख) सामाजिक आदर्श और यथार्थ

ग) एक सार्थक संख्या द्वारा मान्यता।

अब हम इन बिंदुओं पर बारी-बारी से विचार करेंगे।

कोष्ठक 1.2

संकट

संकट एक चिकित्साशास्त्रीय अवधारणा है जो रोगी की रुग्णता की नाजुक स्थिति को दर्शाता है। बहुत से समाजशास्त्री जैसे – कार्ल मॉनहाइम, एल्बॉट सोलोमन और बनोर्ड रोजनबर्ग आदि ने आधुनिक समाज की रुग्णता को स्पष्ट करने के लिए विघटन या विचलन के स्थान पर संकट की अवधारणा के प्रयोग को वरीयता दी है।

1.4.1 जनसाधारण का प्रतिबोधन

प्रायः एक सामाजिक दशा जो समाज के हित में नहीं है लम्बे अंतराल तक बिना किसी पहचान के अस्तित्व में बनी रह सकती है। ऐसी दशा तभी एक सामाजिक समस्या बनती है जब वह एक समस्या के रूप में देखी जाती है। निर्धनता बहुत समय से भारतीय समाज के साथ जुड़ी रही है लेकिन स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् ही "गरीबी हटाओ" कार्यक्रम हमारी नियोजन प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण घटक बना।

जनसाधारण का प्रतिबोधन इस बात पर निर्भर करता है कि कोई समस्या कैसे दृष्टिगोचर होती है। अपराध की पहचान आसानी से होती है और लोग इसका समस्या के रूप में प्रतिबोधन करते हैं। जैसा कि पूर्व में उल्लेख किया गया है, बहुत सी समस्याएँ अस्तित्व में तो हो सकती हैं लेकिन उनका प्रतिबोधन नहीं होता है। कुछ लोग ऐसे होते हैं जो किसी विशेष परिस्थिति से लोगों को अवगत कराने की चेष्टा करते हैं। सामाजिक आंदोलन इसी

प्रकार प्रारंभ होते हैं। बहुत से समाजों में महिलाएँ अनेकों निर्योग्यताओं, जैसे – संपत्ति पर उनका स्वामित्व न होना, विधवा पुनर्विवाह पर रोक, तलाक का निषेध, असमान वेतन आदि से पीड़ित होती हैं। इन परिस्थितियों को कुछ समाजों ने केवल कुछ दशकों पूर्व ही समस्या के रूप में माना। महिलाओं का मुक्ति आंदोलन उनकी दशा के प्रति लोगों को जागरूक बनाने की चेष्टा कर रहा है। इस तरह कहा जा सकता है कि जनसाधारण में सार्थक संख्या में लोगों का होना आवश्यक है जो एक विशेष परिस्थिति को समस्यामूलक माने।

1.4.2 सामाजिक आदर्श और यथार्थ

सामाजिक समस्याएँ "क्या वास्तविक रूप में अस्तित्व में हैं" की तुलना में "क्या होना चाहिए या क्या आदर्श के रूप में माना जाता है" के अंतराल को दर्शाती हैं। सामाजिक आदर्श उसकी मूल्य प्रणाली पर आधारित होते हैं। सामाजिक समस्याएँ एक समाज के अवांछनीय दशाओं के रूप में परिभाषित की जा सकती हैं अवांछनीय क्या है, यह मूल्यों द्वारा परिभाषित होता है। क्या अच्छा और क्या बुरा है, इसका निर्धारण मूल्य करते हैं। पूर्व में यह इंगित किया गया है कि विभिन्न समाजों में भिन्न-भिन्न मूल्य होते हैं। अतः एक समाज में जो बुरा या अवांछनीय माना जाता है उसे दूसरे समाज में वैसा भी माना जा सकता है।

सामाजिक मूल्य गत्यात्मक हैं – वे परिवर्तित होते रहते हैं। कुछ वर्षों पूर्व जिसे एक समस्या माना जाता रहा, अब संभव है कि अवांछनीय न माना जाए। कुछ वर्षों पूर्व, लड़कों और लड़कियों का विद्यालय और महाविद्यालय में साथ-साथ पढ़ना अधिकांश लोगों द्वारा अनुमोदित नहीं था। अब इसका बहुत कम विरोध होता है। कुछ समय पूर्व तक प्रदूषण – कल-कारखानों के धुएँ, कूड़ा-करकट नदियों में डालना, वनों को काटना आदि से लोग बहुत चिंतित नहीं होते थे। यद्यपि, अब पर्यावरण संरक्षण के लिए जागरूकता तथा प्रबल इच्छा है। असंतुलित पारिस्थितिकी के यथार्थ और संतुलित तथा लाभप्रद पर्यावरण के आदर्श में अंतराल दिखाई पड़ रहा है।

1.4.3 सार्थक संख्या द्वारा मान्यता

कोई सामाजिक दशा तब तक सामाजिक समस्या नहीं बनती है, जब तक कि वह पर्याप्त लोगों द्वारा समस्या के रूप में मान्य न हो जाए। मत-निर्माता लोगों के सोच-विचार को प्रभावित कर सकते हैं। पहले प्रदूषण और वनों की कटाई के विषय में कुछ किया जा सकता है, इस पर बहुत थोड़े से लोगों के मन में विचार था। इन समस्याओं द्वारा समाज पर पड़ने वाले गंभीर परिणामों के प्रति अब अधिक जागरूकता है। पेड़ों की कटाई से होने वाले दुष्प्रभावों को कम करने क लिए प्रयास किए जा रहे हैं। यदि लोगों के छोटे समूह द्वारा किसी विशेष परिस्थिति को हानिकारक माना जाता है तो उन्हें लोगों को शिक्षित करने की आवश्यकता है जिससे जन-जागरूकता हो।

1.5 परिभाषाएँ

सामाजिक समस्याओं के विभिन्न दृष्टिकोणों और सिद्धांतों की दृष्टि से इसकी एक सर्वमान्य परिभाषा देना कठिन कार्य है। मर्टन और निसबेट (संपा.) (1971) के अनुसार जहाँ तक सामाजिक समस्याओं की परिभाषा का प्रश्न है, कभी-कभी ऐसा प्रतीत होता है कि मानो यह परस्पर विरोधी सिद्धांतों की अव्यवस्था मात्र है। लेकिन समाजशास्त्र में सैद्धांतिक बहुलवाद की स्थिति है जिसमें अक्सर विभिन्न सिद्धांत एक दूसरे के पूरक होते हैं। सामाजिक समस्याओं को समझने के लिए सिद्धांतों और दृष्टिकोणों की विवेचना हम विस्तृत रूप से इस खंड की इकाई 2 में करेंगे।

निसबेट का मानना है कि सामाजिक समस्याएं व्यवहार का ऐसा प्रतिरूप है जो समाज के बड़े वर्ग द्वारा सामाजिक प्रतिमानों के विरुद्ध माना जाता है (आर.के. मर्टन एंड राबर्ट निसबेट (संपा.) (1971)। मर्टन का विचार है कि सामाजिक समस्याएँ स्वीकृत सामाजिक आदर्शों से विचलन हैं और वे दुष्प्रकार्यात्मक होती हैं।

दूसरी ओर स्पेक्टर और किट्सस ने सामाजिक समस्याओं को परिभाषित करते हुए कहा है कि यह समूहों की क्रियाकला है जो संगठनों, संस्थाओं और अभिकरणों की उन दशाओं का विरोध करते हैं, जिन्हें वे शिकायत योग्य मानते हैं।

इन परिभाषाओं से दो स्पष्ट परिप्रेक्ष्य प्रकट होते हैं :

- सामाजिक समस्याएँ स्वीकृत प्रतिमानों का अतिक्रमण और स्वीकृत सामाजिक आदर्शों से विचलन हैं।
- वे एक प्रकार से कुछ शिकायतों के प्रति प्रतिरोध के समान हैं।

1.5.1 सामाजिक समस्याओं की विशेषताएँ

अब हम सामाजिक समस्याओं की विशेषताओं को समझने का प्रयास करेंगे। वे निम्नवत हैं:

i) एक सामाजिक समस्या बहुत से कारकों से मिलकर बनती है

पूर्व में दर्शाया गया है कि सामाजिक समस्या के मूल में कार्यकारण संबंध होता है। इसका यह आशय नहीं है कि सामाजिक समस्या की व्याख्या केवल एक कारक द्वारा की जा सकती है। निरक्षरता के पीछे बहुत से कारक है उनमें से कुछ प्रमुख हैं – लोगों की शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति, बहुत से क्षेत्रों में विद्यालय का अभाव, लड़कियों की परिस्थिति, छोटे बच्चों का बड़े बच्चों द्वारा देखभाल, कुपोषण और निर्धनता। निरक्षरता की समस्या के समाधान के लिए इन सभी समस्याओं को भी ध्यान में रखना होगा।

ii) सामाजिक समस्याएँ अंतःसंबंधित हैं

प्रायः विभिन्न सामाजिक समस्याओं के मध्य आपसी संबंध होते हैं। अस्वस्थता का संबंध निर्धनता, बेकारी, चिकित्सा की सुविधाओं की अनुपलब्धता तथा महिलाओं की परिस्थिति से है। इन सभी "कार्य-कारण" के मध्य के संबंधों को जानना बहुत दुरुह कार्य नहीं है।

iii) सामाजिक समस्याएँ व्यक्तियों को विभिन्न तरीकों से प्रभावित करती हैं

मुद्रास्फीति की अवस्था में कुछ लोग दूसरों की अपेक्षा इससे अधिक प्रभावित होते हैं। निर्धन या निश्चित आय वाले लोग साधन संपन्न लोगों की तुलना में इसे बड़ी समस्या मानते हैं। दहेज, धनवालों की अपेक्षा निर्धनों के लिए बहुत बड़ी समस्या है। उन परिवारों में जिनमें लड़कियाँ अधिक हैं, दहेज एक भयावह समस्या है। उनके लिए जो कम शिक्षित हैं, या कोई हस्तकौशल नहीं जानते हैं, बेकारी एक गंभीर समस्या है। यह भी संभव है कि कुछ समूह इन समस्याओं से दूसरों की अपेक्षा अधिक प्रभावित हो रहे हों जैसे – महिलाएँ, कमजोर वर्ग, अल्पसंख्यक, ग्रामीण तथा नगरीय निर्धन लोग।

iv) सामाजिक समस्याएँ सभी लोगों को प्रभावित करती हैं

लोग समाज में एक-दूसरे पर निर्भर करते हैं। एक समूह को जो समस्या प्रभावित करती है वह समय के साथ समाज के अधिकांश सदस्यों को भी प्रभावित करेगी। बहुत

कम लोग इस योग्य होते हैं जो हिंसा, बेकारी, मुद्रास्फीति, साम्प्रदायिक दंगों तथा भ्रष्टाचार आदि जैसी समस्याओं से अपनी पूर्ण सुरक्षा कर पाते हैं।

नीथ हेनरी (1978) का यह मानना उचित ही है कि सामाजिक समस्याएं समाजशास्त्रीय प्रक्रिया विचारधारा की दृष्टि से निरूपति तथा विभिन्न सैद्धांतिक दृष्टिकोणों की विषयवस्तु हैं।

बोध प्रश्न 2

i) किसी समाज के लिए कोई विशेष परिस्थिति कब और कैसे हानिकारक मानी जाती है तथा यह कैसे सामाजिक समस्या का रूप ग्रहण करती है? दस पंक्तियों में लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

ii) "सामाजिक समस्या" की परिभाषा, आठ पंक्तियों में दीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

iii) सामाजिक समस्या पर दो पुस्तकों के नाम का उनके लेख/संपादक के नाम सहित उल्लेख कीजिए।

क) .....

.....

ख) .....

.....

iv) सामाजिक समस्याओं की विशेषताएँ गिनाइए :

क) .....

.....

ख) .....

.....

ग) .....

.....

घ) .....

.....

1.5.2 सामाजिक समस्याओं के प्रकार

मर्टन ने सामाजिक समस्याओं का वर्गीकरण निम्न दो भागों में किया है :

i) सामाजिक विघटन

ii) विचलनकारी व्यवहार।

सभी सामाजिक समस्याओं में विघटन तथा विचलन के कुछ तत्व पाए जाते हैं।

i) सामाजिक विघटन

मर्टन के मतानुसार सामाजिक विघटन दो स्थितियों को दर्शाता है :

- सामाजिक प्रणाली में अपर्याप्तता,
- परिस्थिति और भूमिका की निष्प्रभावी कार्यप्रणाली।

सामाजिक विघटन के निश्चित स्रोत होते हैं। सभी समाजों में मूल्यों और हितों पर कुछ सहमति पायी जाती है। जब कभी भी इस सहमति की मात्रा में संघर्षशील हितों से अव्यवस्था आती है तब हम उस विशेष समाज में विघटन की प्रवृत्ति पाते हैं। इसी प्रकार की अवस्था परिस्थिति और भूमिका में भी पायी जाती है। प्रत्येक व्यक्ति की अनेक परिस्थितियाँ होती हैं जैसे – पिता, पति, राजनीतिक दल का सदस्य, व्यवसायी, अपने व्यावसायिक संगठन का सदस्य, आदि। वह अपनी भूमिकाएँ तद्नुसार निभाता है। सामाजिक जीवन में वह भूमिकाओं की प्राथमिकताओं को निर्धारित करता है और तद्नुसार व्यवहार करता है। लेकिन यदि विभिन्न परिस्थितियों और भूमिकाओं के बीच संघर्ष है और लोगों का एक समूह इस स्थिति में नहीं है कि वह अपनी प्राथमिकताओं को निर्धारित कर सके या संघर्षरत भूमिकाओं में पुनर्मेल स्थापित कर सके तो वह समूह सामाजिक विघटन की तरफ अग्रसर होने को बाध्य होता है। समाजीकरण की प्रक्रिया लोगों को समूह की भाषा, प्रथाओं, परंपराओं, संस्कृति और मूल्यों को सीखने में सहायता प्रदान करती है। यदि समाजीकरण की प्रक्रिया परिवार, विद्यालय या स्वजन-समूहों के स्तर पर दोषपूर्ण होती है तो वह समूह के सदस्यों के व्यक्तियों तथा स्वयं समूह के संगठित कार्यकलापों को प्रतिकूल ढ़ंग से प्रभावित करती है। समाज अपने सदस्यों के व्यवहारों को नियमित करने के लिए सामाजिक नियंत्रण की औपचारिक

तथा अनौपचारिक कार्यप्रणाली विकसित कर लेता है। जब कभी भी यह कार्यप्रणाली प्रभावी ढंग से कार्य नहीं करती तब समाज में विघटन की प्रवृत्ति दृष्टिगत होती है।

सामाजिक विघटन, प्रभावकारी संस्थाओं के कार्यकलापों का असफल होना, पारिवारिक विघटन, विवाह विच्छेद, निर्धनता, सामूहिक हिंसा, जनसंख्या विस्फोट, सामुदायिक विघटन और नगरीय समस्याओं जैसे गंदी बस्तियों तथा अमानवीय जीवन दशाओं में प्रकट होता है।

ii) विचलनकारी व्यवहार

विचलित व्यवहार की अवधारणा का प्रयोग समाजशास्त्रियों द्वारा गंभीर अपराधों के साथ ही आचार संहिताओं के उल्लंघन को सम्मिलित करने हेतु किया जाता है। प्रत्येक समाज में साधारण व्यहवार के प्रायः स्वीकृत विचार होते हैं। जब कभी भी कोई इन स्वीकृत प्रतिमानों से अलग हटता है और भिन्न प्रकार से व्यवहार करता है तो उसका यह व्यवहार असामान्य या विचलनकारी व्यवहार माना जाता है।

अपराध, बाल अपराध, मानसिक अस्वस्थता, मादक द्रव्य व्यसन और मद्यपान विचलनकारी व्यवहार के कुछ उदाहरण हैं।

कोष्ठक 1.3

सामाजिक व्याधिका

सामाजिक व्याधिकी समाजशास्त्र का एक उपखंड है जो अवधारणात्मक रूप से चिकित्साशास्त्र में अपनाया गया है। समाजशास्त्रीय साहित्य में सामाजिक विघटन और सामाजिक समस्याओं के शीर्षक से बहुत सी पुस्तकें लिखी गई हैं। समाजशास्त्र का वह उपखंड जो इन समस्याओं से संबंधित होता है उसे प्रायः सामाजिक समस्या या विचलन का समाजशास्त्र कहा जाता है। कुछ समाजशास्त्री जो संकट के पक्ष पर जोर देते हैं इस उपखंड को सामाजिक व्याधिकी कहना पसंद करते हैं।

1.6 सामाजिक समस्याएँ और सामाजिक आंदोलन

सामाजिक समस्याएँ विभिन्न परिस्थितियों के अंतर्गत पुरानी घिसी-पिटी संस्थाओं के प्रतिफल हैं। उदाहरण के लिए, आज भी विश्व के बहुत से देशों में, एक संस्था के रूप में राजशाही, लोकतांत्रिक आकांक्षाओं के विरुद्ध दमनकारी उपायों के लिए उत्तरदायी हैं। इसी प्रकार से, भारत में अस्पृश्यता की समस्या जाति प्रथा से जुड़ी हुई है। हमारे समाज में, तय किए गए विवाहों की व्यवस्था ही मूलतः दहेज एवं दहेज से होने वाली मौतों का कारण है। संस्थागत स्थितियों को छोड़कर, कभी-कभी विकास के कार्यक्रमों से भी सामाजिक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। वनों की कटाई का कारण निर्माण कार्यों, रेलमार्ग, फर्नीचर और ईंधन के लिए व्यापक मात्रा में इमारती लकड़ियों की आवश्यकता ही है। औद्योगिकीकरण और कारखाना प्रणाली के विस्तार ने ही वायु, जल और पृथ्वी को प्रदूषित किया है। बड़े-बांधों, ऊर्जा परियोजनाओं, राजमार्गों इत्यादि के निर्माण से स्थानीय लोगों का बड़े-पैमाने पर विस्थापन हुआ है।

इसके अतिरिक्त सामाजिक समस्याएँ सामाजिक आदर्शों और वास्तविक व्यवहार के मध्य के अंतराल का भी परिणाम हैं। भ्रष्टाचार के विरुद्ध बहुत-सी बातें तथा मूल्य आधारित राजनीति के लिए नारे, समाचार पत्रों, नेताओं और बुद्धिजीवियों इन सभी ने सामाजिक समस्याओं के विरुद्ध सामाजिक समस्याओं के विरुद्ध सामाजिक आंदोलनों के लिए स्थिति पैदा की है। फिर भी हमारे समाज में सार्वजनिक जीवन में भ्रष्टाचार तथा राजनीति के

अपराधीकरण में वृद्धि ही हुई है। जैसा कि जे.आर. फेयगिन ने उल्लेख किया है कि जनता द्वारा सामाजिक समस्याओं और सामाजिक परिवर्तन के विरुद्ध विरोध-प्रदर्शन और आंदोलनों का संगठन अत्यंत महत्वपूर्ण है।

1.6.1 क्रियान्वयन में अवरोध

सामाजिक समस्याओं के विरुद्ध आंदोलनों को आयोजित करना सरल कार्य नहीं है। बहुत से ऐसे निहित स्वार्थ समूह होते हैं। जो चाहते हैं कि यथास्थिति निरंतर बनी रहे। वनों के ठेकेदार पेड़ों को काटे जाने संबंधी रोक का विरोध करेंगे। शराब की दुकान के मालिक मद्य निषेध का कभी भी पक्ष नहीं लेंगे। एक समय पश्चात् आंदोलन, सरकार तथा अन्य संस्थाओं को परिस्थितियों को मान्यता देने एवं दावों की वैधानिकता को मनवाने में समर्थ होते हैं। इसके परिणामस्वरूप सरकार द्वारा इस प्रकार की नीतियाँ बनाई जाती हैं जो परिस्थिति के अनुसार कार्य करें, यथा वनों की कटाई के विरुद्ध नियम, स्त्रियों की दशा सुधारने के लिए बहुत से कानून (समान वेतन, दहेज विरोधी कानून, सती प्रथा, उत्तराधिकारी संबंधी आदि) नीतियों का बनना ही स्वयं में पर्याप्त नहीं है इसे क्रियान्वित करना होता है। प्रायः इसमें विलम्ब या अपर्याप्त प्रयास होता है। तब आंदोलन को नीतियों के क्रियान्वयन पर ध्यान केंद्रित करना पड़ता है। कई बार समस्या का पूर्ण समाधान नहीं होता है। सामाजिक आंदोलन दर्शाते हैं कि लोगों के सामूहिक प्रयत्न अधिकारियों को क्रियाशील बना देते हैं।

1.6.2 आंदोलन के सोपान

किसी समाज में अक्सर पुरानी संस्थात्मक स्थितियों, दोषपूर्ण कार्यक्रम तथा आदर्शों और आचरणों में बढ़ते अंतर को या तो अधिकांश शक्तिप्रिय लोगों द्वारा अनुभव नहीं किया जाता है या उस पर ध्यान नहीं दिया जाता है। कुछ लोग इस योग्य होते हैं कि इन समस्याओं पर ध्यान दें। प्रथम सोपान पर, सामाजिक समस्याओं के प्रति, कुछ लोगों की या एक छोटे समूह की जागरूकता होती है, द्वितीय सोपान पर, वे अपने दृष्टिकोण को लोगों के बीच प्रचारित करने की चेष्टा करते हैं, तृतीय सोपान पर, संगठित रूप से असहमति, विरोध तथा प्रदर्शन होता है और अंत में यह एक आंदोलन के निर्माण की ओर अग्रसर होता है। यदि हम सती प्रथा का उदाहरण लें जो भारत में 19वीं शताब्दी में प्रचलित थी और राजा राममोहन राय ने जिसके विरुद्ध आंदोलन प्रारंभ किया था जो हम पाते हैं कि सती प्रथा के विरुद्ध आंदोलन उन सभी दिशाओं से होकर गुजरा है जिसका उल्लेख ऊपर किया गया है। आजकल, सम्पूर्ण विश्व में और मुख्य रूप से भारत में महिलाओं के हितों तथा अधिकारों की रक्षा हेतु एक शक्तिशाली महिला आंदोलन चल रहा है। भारतीय महिलाओं के संगठन, प्रबुद्ध नागरिकों और जनसंचार के माध्यमों के साथ, दहेज तथा दहेज से होने वाली मौतों के विरुद्ध संघर्षरत हैं। इसी प्रकार पर्यावरणविदों को पारिस्थितिकी अपकर्ष और प्रदूषण के विरुद्ध आंदोलन है। उत्तर प्रदेश के पर्वतीय भाग में प्रारंभ किए गए "चिपको आंदोलन" ने जो वनों की कटाई के विरुद्ध है, विश्वव्यापी ध्यान आकर्षित किया है। स्वयंसेवी संगठनों और अधिकारियों द्वारा मादक द्रव्य-व्यसन तथा मद्यपान के विरुद्ध जागरूकता पैदा करने का प्रयास किया जा रहा है।

सामाजिक समस्याओं के सुधारवादी उपायों तथा सामाजिक आंदोलन के बीच एक निकट का संबंध पाया जाता है। सामाजिक आंदोलन तब उत्पन्न होता है जब कुछ लोग यह अनुभव करते हैं कि एक विशेष परिस्थिति समाज के लिए लाभप्रद नहीं है और उसे परिवर्तित करने के लिए कुछ किया जाना चाहिए।

1.7 सामाजिक समस्याएँ और सामाजिक नीति

सामाजिक नीति सरकार के उस दृष्टिकोण को दर्शाती है जिसे वह किसी विशेष परिस्थिति के प्रति रखती है तथा उसका किस प्रकार मुकाबला करती है। भारत में शिक्षा, महिला, पर्यावरण, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जन-जाति, नगरीकरण तथा मादक द्रव्य व्यसन से संबंधित सामाजिक नीति है। सामाजिक आंदोलन सामाजिक समस्याओं और सामाजिक नीति का आपस में प्रगाढ़ संबंध होता है।

सामाजिक आंदोलन सरकार पर यह दबाव रखते हैं कि वह सामाजिक समस्याओं के नियंत्रण के लिए सुधारवादी कार्यक्रमों को तैयार करे। इस प्रसंग में हमें यह ध्यान रखना होगा कि मात्र नीति को स्वीकारने और उसकी घोषणा करने से सामाजिक समस्याओं का समाधन नहीं होता है। शारदा एक्ट बाल विवाह को रोकने के लिए बनाया गया था लेकिन वह बाल-विवाह को पूरी तरह से रोकने में सफल नहीं रहा। अस्पृश्यता के विरुद्ध सामाजिक विधानों को पांचवें दशक के मध्य में पारित किया गया था लेकिन वह आज तक हमारे समाज से अस्पृश्यता संबंधी व्यवहार का पूर्ण रूप से उन्मूलन नहीं कर सका। संवैधानिक प्रावधानों के होते हुए भी विद्यालय जाने योग्य सभी बालक विद्यालय नहीं जा पाते हैं।

वास्तव में, सुदृढ़ सामाजिक आंदोलन, जन-जागरूकता और आधिकारिक नीतियाँ – इन तीनों को आपस में मिलकर सामाजिक समस्याओं के विरुद्ध कार्य करना चाहिए। इस प्रसंग में हमें यह ध्यान रखना होगा कि आधुनिक समाज में राज्य एक अत्यधिक शक्तिशाली और महत्वपूर्ण संस्था है। सामाजिक समस्याओं के विरुद्ध संघर्ष में इसकी बहुत अहम भूमिका है। लेकिन राज्य के हस्तक्षेप की अपनी सीमाएँ हैं और यह अधिक प्रभावी ढंग से तभी कारगर हो सकती हैं जब राज्य के कार्यक्रमों और स्वीकृत नीतियों को जन-समर्थन प्राप्त हो।

1.7.1 नीति, विचारधारा और कल्याण

हमें अभी एक ओर सामाजिक नीतियों और सामाजिक कल्याण तथा दूसरी ओर सामाजिक नीति और सामाजिक विचारधारा के मध्य के संबंध को समझना है। सामाजिक नीतियों और सामाजिक कल्याणकारी नीतियों के मध्य भिन्नता को स्पष्ट करना कठिन है क्योंकि कुछ ऐसे समूह हैं जिन्हें सामाजिक नीतियों के अंतर्गत रखा जाता है पर उन लोगों को कल्याण की भी आवश्यकता है।

संपूर्ण विश्व में राज्य, विचारधाराओं पर ध्यान न देकर, कल्याणकारी नीतियाँ स्वीकार कर रहे हैं जैसे कि बाल-कल्याण, युवा-कल्याण, महिला-कल्याण, वृद्ध-कल्याण, कमज़ोर वर्गों का कल्याण, रोज़गार संबंधी नीतियाँ, सुरक्षा, स्वास्थ्य कार्यक्रम, शिक्षा, पारिस्थितिकी तथा ग्रामीण-स्तरीय विकास। इन नीतियों ने बहुत-सी सामाजिक समस्याओं के जोखिमों को रोकने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। सामाजिक समस्याओं से संबंधित नीतियाँ, विचारधारा पर आधारित होती हैं। पूँजीवादी दृष्टिकोण यह होगा कि खुला बाजार और मुक्त अर्थव्यवस्था समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति करेगी। व्यक्ति अपने कल्याण की देखभाल कर सकते हैं। समाजवादी यह अनुभव करते हैं कि राज्य के हस्तक्षेप द्वारा सामाजिक संरचना में परिवर्तन लाया जा सकता है। इसीलिए एक सरकार अपनी वैचारिक प्रतिबद्धता के आधार पर नीतियों को प्रतिपादित करती है। सभी सामाजिक समस्याओं से संबंधित कोई एक व्यापक नीति नहीं हो सकती है। प्रत्येक समस्या को अलग-अलग सुलझाना होगा। अक्सर विशेष समस्याओं से संबंधित कानून पारित किए जाते हैं। उदाहरणार्थ – मादक द्रव्य-व्यसन, दहेज, मद्य निषेध, बाल-मज़दूर आदि। यह स्पष्ट होगा कि इनमें प्रत्येक से एक विशेष प्रकार का व्यवहार किया जाए।

i) सामाजिक विघटन की परिभाषा उपयुक्त उदाहरणों सहित पाँच पंक्तियों में दीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

ii) विचलित व्यवहार क्या है? उपयुक्त उदाहरणों सहित चार पंक्तियों में लिखिए।

.....

.....

.....

.....

iii) सामाजिक आंदोलन के विभिन्न सोपानों का उल्लेख चार पंक्तियों में कीजिए।

.....

.....

.....

.....

iv) सामाजिक नीति को परिभाषित कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

1.8 सारांश

इस इकाई का प्रारंभ रूपांतरण की अवधारणा तथा इसके दो प्रारूपों – आधुनिकीकरण और क्रांति से हुआ। इस इकाई में सामाजिक रूपांतरण और समस्याओं के मध्य संबंध, अवधारणाएँ, परिभाषाएँ, विशेषताएँ और सामाजिक समस्याओं के प्रकारों की भी विवेचना की गई है। सामाजिक समस्याओं, संस्थाओं और आंदोलनों के मध्य की श्रृंखलाबद्धता का भी इस इकाई में विवेचन किया गया है। और अंत में रूपांतरण और समस्याओं से संबंधित नीति संबंधी निहित आशयों पर भी, इस इकाई में प्रकाश डाला गया है।

1.9 शब्दावली

सामाजिक रूपांतरण : यह एक विस्तृत अवधारणा है जिसमें एक ओर उद्‌विकास, प्रगति, परिवर्तन तथा दूसरी ओर विकास आधुनिकीकरण और क्रांति का अर्थ सम्मिलित है। इसका शाब्दिक अर्थ सामाजिक जीवन के स्वरूप, आकृति तथा चरित्र में परिवर्तन से है।

आधुनिकीकरण : एक परंपरागत कृषक, ग्रामीण, प्रथा-आधारित विशिष्टतावादी संरचना से नगरीय, औद्योगिक, प्रौद्योगिकी तथा सार्वभौमिकीय संरचना में होने वाले विकास की प्रक्रिया को आधुनिकीकरण कहा जाता है।

क्रांति : हिंसात्मक या अहिंसात्मक अप्रत्याशित सामाजिक परिवर्तन जो परिस्थिति को मोड़ दे या उसमें आमूल परिवर्तन लाये उसे क्रांति कहते हैं।

सामाजिक समस्याएँ : सामाजिक व्यवहार के प्रतिरूप जो स्वीकृत सामाजिक प्रतिमानों का उल्लंघन या शिकायतों के प्रति प्रतिरोध हैं, सामाजिक समस्याएँ कही जाती हैं।

विचलित व्यवहार : समाजशास्त्री इस अवधारणा के अत्यंत गंभीर अपराधों और नैतिक संहिताओं के उल्लंघन को सम्मिलित करते हैं। जब कभी लोगों द्वारा स्वीकृत "सामान्य व्यवहार" का उल्लंघन किसी के व्यवहार द्वारा होता है तो उसे विचलित व्यवहार की संज्ञा दी जाती है।

1.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

i) सामाजिक रूपांतरण एक व्यापक अवधारणा के रूप में सामाजिक गत्यात्मकता को इंगित करने के लिए प्रयुक्त होता है। इस अवधारणा का शाब्दिक अर्थ सामाजिक स्वरूप, आकृति अथवा चरित्र के परिवर्तन अथवा अपनी मूल पहचान को खो देने वाले बदलाव से है। मार्क्स के अनुसार रूपांतरण सामाजिक परिवर्तन का वह पक्ष है जो समाज में उत्पन्न होने वाले उन अंतर्विरोधों की ओर इंगित करता है जो समाज को त्वरित परिवतर्न या क्रांति की तरफ अग्रसर करता है। सामाजिक रूपांतरण उस परिवर्तन को निर्दिष्ट करता है जो समाज के स्वरूप में परिवर्तन या नवीन विरचनों की उत्पत्ति करता है।

ii) क) आधुनिकीकरण

यह उस अर्थव्यवस्था, राजनीति और औद्योगीकृत पूँजीवादी समाज का प्रतिनिधित्व करता है जिसमें या तो विपुल समृद्धि है और या तो अत्यधिक अभाव या कष्ट। रूपांतरण का यह प्रतिरूप मानव जाति के एक बड़े भाग में निर्धनता, बेकारी और वंचना के लिए तथा एक छोटे हिस्से में विपुल समृद्धि, अत्युत्पादन और अत्युपभोग के लिए उत्तरदायी है।

ख) क्रांति

साम्यवाद के कार्यप्रणाली की, क्रांति के प्रतिफल के रूप में अपने साहचर्यो – तानाशाही, पुलिस आतंक, देश निकाला, मानवाधिकारों का हनन, उत्पादन में अवनति, अर्थव्यवस्था का पतन और दलीय पदाधिकारियों और राज्याधिकारियों के नए वर्ग की रचना के लिए आलोचना की जाती रही है।

iii) क) जोसेफ जे स्पेंगलेर : द डिक्लाइन ऑफ द वेस्ट

ख) पी.ए. सोरोकिन : द सोशल एंड कल्चरल डाइनमिक्स

ग) कार्ल मैनहीम : मैन एंड सोसायटी : इन एन एज ऑफ रिकान्स्ट्रक्शन

घ) पेल्नी, एल. बर्जर : होमलेस माइन्ड एंड अदर्स

बोध प्रश्न 2

i) सामाजिक समस्याएँ वे व्यापक दशाएँ हैं जिनका समाज के लिए हानिकारक परिणाम होता है। हानिकारक होने का प्रतिबोधन समाज के प्रतिमानों और मूल्यों पर निर्भर करता है। सामाजिक रूपांतरण से कुछ समस्याएँ सीधे जुड़ी होती हैं। तीव्र औद्योगीकरण, क्षेत्रीय असंतुलन, प्रदूषण और गंदी बस्तियों की समस्याएँ उत्पन्न करता है। निम्नलिखित दशाओं में एक स्थिति हानिकारक मानी जाती है और सामाजिक समस्या हो जाती है:

क) सामाजिक आदर्शों और वास्तविकताओं के मध्य अंतर

ख) एक सार्थक संख्या द्वारा मान्यता

ii) सामाजिक समस्याएँ समाज के एक बड़े भाग द्वारा व्यवहार का ऐसा प्रतिरूप मानी जाती हैं जिनसे स्वीकृत सामाजिक प्रतिमानों का उल्लंघन होता है। ये स्वीकृत सामाजिक आदर्शों से विचलन को इंगित करती हैं। इसीलिए वे दुष्प्रकार्यात्मक हैं। दूसरी परिभाषा, सामाजिक समस्याओं को समूह का वह क्रियाकलाप मानती है जो इन परिस्थितियों को जिन्हें वे शिकायतपूर्ण मानते हैं, के विरुद्ध प्रतिरोध से संबंधित हैं।

iii) क) राबर्ट के. मर्टन एंड राबर्ट निसबेट : कंटम्पोरेरी सोशल प्राब्लम्स

ख) नीथ, हेनरी : सोशल प्राब्लम्स इंस्टीट्यूशनल एंड इंटर पर्सनल पर्सपेकटिव्स।

iv) क) एक सामाजिक समस्या बहुत से कारकों से उत्पन्न होती है।

ख) सामाजिक समस्याएँ अंतः संबंधित हैं।

ग) सामाजिक समस्याएँ व्यक्तियों को विभिन्न प्रकार से प्रभावित करती हैं।

घ) सामाजिक समस्याएँ सभी लोगों को प्रभावित करती हैं।

बोध प्रश्न 3

i) सामाजिक विघटन प्रभावशील संस्थागत कार्य प्रणाली के टूटन को दर्शाता है। जब कभी भी समाज में संघर्षरत मूल्यों के कारण संतुलन बिगड़ता है तो सम्यक् समाजीकरण का अभाव तथा सामाजिक नियंत्रण की क्रियाविधि में दुर्बलता आती है। समाज की यह अवस्था सामाजिक विघटन कहलाती है। इसके उदाहरण हैं – पारिवारिक विघटन, वैवाहिक असफलता और सामुदायिक विघटन।

ii) प्रायः प्रत्येक समाज में "सामान्य" व्यवहार के स्वीकृत विचार होते हैं। जब कभी कोई स्वीकृत प्रतिमानों से अलग हटता है और भिन्न प्रकार से व्यवहार करता है तो उसका वह व्यवहार असामान्य या विचलित व्यवहार माना जाता है। विचलित व्यवहार के अपराध, बाल-अपराध, मानसिक असंतुलन, आदि उदाहरण हैं।

iii) क) कुछ व्यक्तियों में जागरूकता

ख) लोगों के बीच अपने दृष्टिकोणों को फैलाना

ग) संगठित मतभेद, विरोध, प्रदर्शन

घ) अंत में, एक आंदोलन का निर्माण

iv) सामाजिक नीति सरकार का वह दृष्टिकोण है जो वह किसी विशेष परिस्थिति के प्रति रखती है और वह तद्नरूप उस परिस्थिति का मुकाबला करती है।